# आतंकवाद स्वरूप और आयाम

**डॉ. एम. डी. थॉमस**

---

**भूमिका:** वर्तमान समय में समूचे विश्व का माहौल आतंकवाद से किसी-न-किसी प्रकार से प्रभावित है। कोई आतंक मचा रहा है, कोई आतंक का शिकार हो रहा है और कोई आतंक की इन दोनों स्थितियों को देखकर हैरान हो रहा है। इस संदर्भ में किसी भी नेक इन्सान हो चाहिए कि वह आतंकवाद की भयानकता और उसके गंभीर परिणामों को समझो और महसूस करे। साथ ही, यह भी चाहिए कि इन्सान की बिखरी हुई सकारात्मक ऊर्जाओं को इकठ्ठा कर इस घिनौनी बीमारी के विरूद्ध एक सांम्मलित अभियान का संकल्प किया जाए और उस पर ज़िन्दगी की कार्य-शाला में अमल किया जाए। इस महान और महत्वाकांक्षी उपक्रम के तहत प्रस्तुत है—आतंकवाद के तथ्यविषयक और मनोज्ञानिक विश्लेषण का एक प्रयास।

### 1. आतंक और आतंकवाद : मूल अर्थ

'आतंक' शब्द के विश्लेषण के लिए 'आतंक' तत्व के तीन पहलुओं को उजागर करना आवश्यक है। पहला, खुद 'आतंक' है। दूसरा, 'आतंकित करने वाला' है। तीसरा, 'आतंकित होने वाला' है।

'**आतंक**' एक विकलतापूर्ण मानसिक स्थिति है। इसमें जहाँ एक ओर मन बेचैन है, वहाँ दूसरी ओर शरीर पीड़ा, रोग आदि कष्ट से ग्रस्त है। '**आतंकित करने वाला**' भारी अत्याचार, संकट आदि के माध्यम से या अपने प्रभाव प्रभुत्व और शक्तिमता के बलबूते किसी को दबाने, हठाने या विस्थापित करने का प्रयत्न करता है। '**आतंकित होने वाला**' अपने आपको कुछ सोचने-समझने या करने-धरने में प्राय: असमर्थ पाता है। अपनी एकाग्रता भंग होने की वजह से वह खुद विचलित-सा महसूस करता है। '**आतंक**' का मूल अर्थ 'अस्वस्थ होना' है। यह अर्थ आतंकित करने वाले तथा आतंकित होने वाले-दोनों पर कुछ स्वरूपभेद और पूवपर समयभेद के साथ लागू होता है। '**आतंकित करने वाला**' आतंक के कारण स्वयं अस्वस्थ हो जाता है और 'आतंकित होने वाले' को भी अस्वस्थ कर देता है। 'स्वास्थ्य' स्वयं में स्थित होना है। आतंक 'अस्वास्थ्य' है। आतंक की स्थिति में आतंकित करने वाला तथा आतंकित होने वाला दोनों स्वयं में स्थित नहीं होकर 'अस्वस्थ' हैं। आतंक की प्रक्रिया में आतंवि त होने वाला दोनों स्वयं में स्थित नहीं होकर 'अस्वस्थ' हैं। आतंक की प्रक्रिया में आतंकित करने वाला जहाँ कर्ताप्रधान और सक्रिय हैं, वहाँ आतंकित होने वाला कर्मप्रधान और निष्क्रिय है। आतंक के दोनों सिरे बराबर रोगग्रस्त स्थिति में हैं।

'**आतंकवाद**' वि सी व्यक्ति द्धारा किसी दूसरे व्यक्ति के जीवन या उसकी सम्पति को सीधे नुकसान पहुँचाने को कहते हैं। यह लोगों को डरा-धमकाकर अपना उदेश्य सिद्ध करने का सिद्धान्त है। यह दूसरों को आतंक से प्रभावित करके अपना स्वार्थ पूरा कराने का मत है। यह किसी को आतंक की छाया में धकेल कर उनसे बलपूर्वक नाजायज लाभ उठाने का तरीका है। यह अत्यधिक भय या विनाश पैदा करके व्यक्तिगत लाभ लेने या दूसरों पर बदला लेने की कार्यवाही है। विनाश की धमकी, विनाश का कार्य, षड्यन्त्र, हिंसा या अन्य गतिविधि, जो किसी व भावी अस्तित्व के लिए भय पैदा या किसी के लिए अस्तित्व का संकट पैदा करे, यही आतंकवाद है। प्राकृतिक संपदा या संसाधनों को नुकसान पहुँचा कर किसी व्यक्ति को बर्बाद करना भी आतंकवाद है। इस प्रकार, आतंकवाद एक अत्याचारपूर्ण जीवन-शैली है।

आतंकवाद स्वभाव से अराजक है। दूसरे पर हमला करना इसकी बुनियादी प्रवृत्ति है। इसमें असीम गुप्तचर क्षमता है। संयमित न्याय इसके बूते के बाहर है। इसे मूल्यों की परवाह कतई नहीं हैं। अपने लक्ष्य को साधित करने के लिये दुर्व्यवहार क्या, बल

प्रयोग तक इसके लिए जायज है। आतंकवाद एक अजीबो-गरीब जुनून है। विवकेशून्य धारण इसका सम्बल है। यह रूढ़िवाद की आड़ में पनपता है और अन्धविश्वास, कट्टरता, क्रूरता, हिंसा आदि का सहारा लेकर बढ़ता है। उदण्डता और उग्रता इसका ढंग है। निरकुशता और तानाशाही इसकी कार्यशैली है। लाकतंत्र में इसका विष्वास नहीं है। फांसीवाद, नाजीवाद आदि हिंसक विचारधाराएँ इसकी पूँजी हैं। आतंकियों को पनाह देना, उन्हें छिपाना, धन आदि से साथ देने का अप्रत्यक्ष कार्य भी आतंकवाद की योजना में शामिल हैं।

**2. आतंकवाद की बुनियाद : मूलसिद्धान्तवाद या रूढ़िवाद**

मूल के रूप में किसी सिद्धान्त का होना किसी भी व्यक्ति, समुदाय या आंदोलन के अस्तित्व या विकास के लिये अत्यन्त आवश्यक है। यह मूल विचार या भाव किसी धार्मिक या सामाजिक संदर्भ में पनपता है। किसी परम्परा की शुरुआत इसी से होती है; उसकी दिशा भी इसी से बनती है। इसका स्रोत या तो किन्हीं महापुरुष की बुनियादी जीवनदृष्टि होता है या किन्ही ऋषि-मुनियों का अनुभवसिद्ध ज्ञान। मूल सिद्धान्त एक स्वीकारात्मक ऊर्जा के रूप में जितना ज़रूरी है ठीक अतना अच्छा भी है। लेकिन, चलते-चलते यह सिद्धान्त रूढ़ हो जाता है और इसके अनुगामियों के सामाजिक व्यवहार को मंत्रस्वरूप प्रभावित करने लगता है। शनैः शनैः यह सिद्धान्त लोगों की व्यावहारिक आदतों की सिराओं में उतरता है और एक अटल और असाध्य प्रतिबद्धता बन जाता है। मूलसिद्धान्तवाद या रूढ़िवाद इसी का नाम है।

**मूलसिद्धान्तवाद या रूढ़िवाद एक अतीतोन्मुख प्रवृत्ति है।** यह किसी शुरुआती सोच को ही सब कुछ मानने का एक अतिरंजित मत है। स्तनपान बच्चों के लिए संजीवनी के समान है। लेकिन एक निश्चित हद या उम्र के बाद बच्चे का अपनी माँ के स्तन से जकड़ कर रहना ठीक नहीं माना जाता। ठीक उसी प्रकार मूलसिद्धान्त में फँसे रहने से विकास अवरोधित हो जाता है। भूतकाल के गुलाम हो जाने पर वर्तमान और भविष्य अविकसित रह जाता है। रूढ़ियों के चक्रव्यूह में पड़ने से जीवन की दिशा ही छूट जाती है। मूलसिद्धान्तवाद ऐसी एक अस्वाभाविक विचारधारा है।

**मूलसिद्धान्तवाद में एकतत्ववाद का भाव है।** अनेकता के लिए उसमें गुंजाइश कतई नहीं है। अपने मूल से प्राप्त जीवनदृष्टि के प्रति, चाहे वह धार्मिक हो या सामाजिक, ऐसी आसक्ति रहती है कि दूसरे किसी तत्व की संभावना की कल्पना तक नामुंकिन हो जाती है। मूलसिद्धान्तवादी सत्य को पूर्णतया जानने का दृढ़ विश्वास और दावा करता है। जीवन के प्रति एकांतिक निष्ठा उसकी पहचान है। '**मैं सही हूँ**', '**मैं सही हूँ**',- यह उसकी तीव्र भावना है। अपने मूल सिद्धान्तों के साथ अनुरूपता बनाये रखना और उसके लिए एव नशे के समान है। अनन्य की भावना, श्रेष्ठता की ग्रन्थि और निरपेक्ष विचार मूलसिद्धान्तवाद के कुछ पर्याय हैं।

**मूलसिद्धान्तवाद या रूढ़िवाद में वैचारिक और भावनात्मक संकीर्णता झलकती हैं।** कुएँ के मेंढ़क के समान अपने में संतुष्ट रहना या 'अहम' के भाव में मस्त रहना उसका स्वभाव है। आत्मा गतिशील है और अभिव्यक्ति में विविध है। अपने से भिन्न किसी बात या अभिव्यक्ति को नकारना आत्मा का अवमानना है। रूढ़िवाद का ऐसा दृष्टिकोण महज सांसारिक है और धर्म के अनुकूल नहीं है। हर एक के लिए जिंदगी का अपना-अपना हिस्सा है। दूसरे की खासियत को नहीं मानना, उसका सम्मान नहीं करना, उसके हिस्से का अतिक्रमण है। अपने नजरिये को सर्वोच्च मानना या अपने को भ्रमातीत मनाना दूसरों पर राज करने की टेढ़ी चाल है। सम्पूर्ण सत्य की आड़ में मूलसिद्धांतवादी सत्ता की राजनीति खेलता हैं साथ ही, दूसरे में सत्य को नकारने के कारण वह सत्य को ही संकुचित कर देता है। जिंदगी बहु-आयामी है। यह बुनियादी समझ मूलसिद्धांतवादी को नसीब नहीं आती।

**मूलसिद्धांतवाद एक पूँजीवादी जीवनशैली है।** इसमें दुनिया का मालिक बनने की होड़ पायी जाती है। नेता, चाहे वह धार्मिक हो या राजनैतिक, प्रायः अपने अनुयायियों को सोचने के हक से वंचित कर उन्हें गुलाम बना लेते हैं। सोचने की क्षमता के क्षीण हो जाने के कारण अनुनायी जनता रूढ़ियों में सहज भाव से अपनी विश्वास-रूपी पूँजी जमा करते हैं। उसमें अन्धविश्वास रूपी मोर्चा लगता है और उसे नेता-रूपी चोर सेंध लगाकर चुराता है। बिना सोचे-समझे किया जाने वाला निश्चय या स्थिर किया हुआ

मतह ही अंधविश्वास है। यह स्वार्थ से कलंकित नेताओं की चालबाजी से दूषित होकर मूलसिद्धान्तवाद का रूप लेता है। रूढ़ियों का संकल्प हमेशा आत्मघाती साबित होता है। निरंकुश शासन-तंत्र इस पद्धति का मेरूदंड है। धर्मशास्त्री या राजनीतिज्ञ और पुरोहित  या मंत्री रूढ़िवाद के लाभ के भागी-पक्ष में गिनाये जाते हैं। समाज जितना संगठित है, शासन-तंत्र ठीक उतना भ्रष्ट भी होगा। इस तंत्र से जुड़े स्वार्थपरस्त तथा सत्ताधारी लोग परम्पराओं की छत्रछाया को स्वीकार नहीं करने वाले को काफ़िर घोषित किया करते है। परम्परा से चली आयी हुई धारण, चाला, प्रथा, निश्चय आर्द दकियानुसी लोगों के लिए सर्वेसर्वा है।

**रूढ़िवाद अपनी मानसिक कमज़ोरी का परिचायक है।** जिंदगी गत्यात्मक है। प्रगतिशील रहना उसका स्वभाव है। प्रगतिशीलता से अभिप्रेरित नये विचार, मूल्य और व्यवहार के प्रवाह में जो टिक नहीं पाता हो, उसका कछुए के समान अपने कवच में खिसक जाना स्वाभाविक है। जो निश्चित और स्पष्ट हो, जिससे आदी हो चुका हो, उससे लगे रहने में सुरक्षित भावना रहती है। नयेपन के साथ हमेशा जोखिम जुड़ा हुआ है। उसमें अनिश्चितता और अव्यवस्था है। उसमें अकेलापन और असुरक्षा की भावना है। लेवि न, जो जोखिम नहीं उठा पाता, जो नयेपन की ओर छलांग नहीं लगा सकता, वह असामयिक बुढ़ापे का शिकार होता है। उसमें मुर्दे की भावना है। यह स्थिति अकाल क्या, अपनामानजनक मृत्यु के समान है। यह आदत की लाचारी है। जो ऐसी दुर्बलता के कुहासे में फँसा है, वह जिंदगी में कोई तरक्की नहीं कर सकता। एक भँवर-जाल सी कमज़ोरी के रूप में रूढ़िवाद अपना दुश्मन खुद है। यह दुर्दशा रूढ़िवादी के लिये एक अपरिहार्य नियति बन जाती है।

**रूढ़िवाद एक मौलिक विकृति है।** इस में प्राकृतिक नियमों का निपर्यय पाया जाता है। पराभिमुख होना, अर्थात् एक-दूसरे की ओर उन्मुख होना, प्राणी का स्वभाव है। रूढ़िवाद आत्म-केन्द्रित चिंतन है। अपने मूल की परम्परा ही सच्चाई की कसौटी पर खरी उतरती है, उसकी ऐसी मान्यता है। अन्य विचारधाराओं और विश्वासों से वियुक्त रहने में उसकी अपनी गरिमा है। यह पृथक पहचान उसकी खण्डित मानसिकता की ही सबूत है। ऐसी हट-धर्मिता, वैचारिक और भावनात्मक दोनों स्तरों पर, उसके लिए एक लाइलाज बीमारी साबित होती है। साथ ही, रूढ़िवाद अतीत  के पर्याय के रूप में और एकतत्ववादी दर्शन के रूप में अकेले रहने के समान है। महात्मा ईसा का कहना है— ''जब तक गेहूँ का दाना मिट्टी में गिरकर नहीं मर जाता, तब तक वह अकेला ही रहता है; परन्तु यदि वह मर जाता है, तो बहुत फल देता है''; (पवित्र बाइबिल, वाल्द-बुल्के; (अनु.) सत्प्रकाशन, इन्दौर, 1990, योहन 12. 24, पृ. 167) । इसी प्रकार जो अतीत मरकर वर्तमान में परिवर्तित न हुआ हो और जो तत्वों दूसरे तत्वों से समवय स्थापित करते हुए आपसी समृद्धि के मार्ग को नहीं अपनाया हो, वह अकेले में मर जाता है, फल उत्पन्न नहीं कर पाता। जीवन की स्वाभाविक प्रक्रिया के विपरीत होना प्रकृति की विकृति है, जो कि मौत से बदतर जिंदगी है।

**मूलसिद्धांतवाद एक आत्म-रक्षात्मक प्रतिक्रिया है।** वह जीवन के एक सिद्धान्त को सार्वभौम मानने-मनवाने का तंत्र है। वह जीवन के साथ एक स्वत्वात्मक रवैया अपनाता है। अनेक सिद्धान्तों या तत्वों के टक्कर से होती असफलता को छिपाने के लिए कमजोर मन को अपने सिद्धान्त की मौलिकता और सम्प्रभुता की ताकत जताना पड़ता है। जीवनदृष्टि में हुई गलतफहमी के कारण होती पराजय-भावना या हीनता-ग्रन्थि को ढ़कने के लिये श्रेष्ठता का अभिनय करना मूलसिद्धांतवादी की मज़बूरी है। कुछ सुरक्षित रखने के चक्कर में वह सब कुछ को खो देता है। खो जाने के भय के मारे वह पाने की महान पूँजी से कतराता है। मूलसिद्धांतवादी अपने चेहरे के दाहिने-बायें बंधे हुए घोड़े के समान हैं। वह जीवन में एक संकुचित पटरी को लेकर चलता है।

रूढ़िवादी उस गधे के समान है जो किसी अटाले घर को, किसी के कहने पर, अपने कार्य की व्यर्थता को नहीं समझते हुए ढ़ोता है। 'हल्का चले, सुखी चले'—यह नीति रूढ़िवादी की नहीं है। सबसे पुराने को स्वर्णिम समझने की झूठी अस्मिता के कारण वह खेमेबाजी की काल्पनिक दुनिया में विचारण करता है। वह खुली सोच से वंचित होकर जीवन से धोखा खाता है और असली विश्वास, आध्यात्मिकता और इंसानियत से हाथ धो बैठता है। वह अपने भ्रमात्मक सिद्धांतों के बड़प्पन के कारण जीवन के रहस्य की परतों में प्रवेश नहीं कर पाता। वह सृष्टि की अनेकता ओर उसकी खूबियों से रू-ब-रू नहीं हो पाता मूलसिद्धांतवाद अपने मूल धर्मपुरुष या महात्मा के लिये अपमानजनक है, उसके लिए बदनाम साबित होता है। वह उनके साथ विश्वासघात से बढ़कर

कुछ भी नहीं है। कुल मिलाकर मूलसिद्धांतवाद या रूढ़िवाद एक प्रतिक्रियावादी आत्मप्रवंचना होकर रह जाता है, जो कि परम दुर्भाग्यपूर्ण ही है।

**मूलसिद्धांतवाद या रूढ़िवाद आतंकवाद की जड़ है।** जड़-मूले में फँसना एक पागलपन है। चलते-चलते रूढ़ियों का नशा उन्माद का रूप ले लेता है। अर्धसत्य को सम्पूर्ण सत्य तथा खण्ड को अखण्ड समझने का दावा मूलसिद्धांतवादी को अहंकार से चूर कर देता है। अधूरे सत्य के अतिश्योक्तिपूर्ण रूप के कारण कट्टर होना उसके लिए एक अनिवार्य मज़बूरी हो जाती है। वह सत्य के अन्य सभी आयामों की कठोर अवज्ञा करने पर तुला रहता है। सम्पूर्ण सत्य के तिरस्कार के कारण मूर्लासद्धान्तवादी दूसरे के हिस्से का अतिक्रमण कर डालता है। अतिक्रमण हमेशा आक्रमणशील है और उग्र रूप को धारण करता है। इस प्रकार रूढ़िवाद एक 'अतिसंवेदनशील' मामला होकर समाज के लिये खतरनाक साबित होता ही नहीं, प्रत्यक्ष आतंकवाद में परिणत होता है।

### 3. आतंकवाद की अभिव्यक्ति हिंसा

**हिंसा का मूल 'हिंस'** है, जिसका अर्थ है मारना। जीव की हत्या करना या उसे किसी प्रकार की हानि या कष्ट पहुँचाना उसका अनिष्ट करना, असे सताना आदि हिंसा है। किसी के शरीर को मारना ही हिंसा नहीं होती। किसी के भाव को कुचलना, किसी के विचारों को दबाना, किसी के साथ कठोर व्यवहार करना, किसी को अपमानित करना, किसी के साथ ईर्ष्या-द्वेष करना, किसी के साथ क्रूर व्यवहार करना, किसी को डराना-धमकाना—यह सब हिंसा के भिन्न-भिन्न रूप हैं। दूसरे पर किसी भी प्रकार का प्रहार हिंसा है। दूसरे की स्वतंत्रता का हनन, अर्थात् बोलने, लिखने, करने, असहमत होने आदि की, हिंसा है। दूसरे पर अपना मत थोपने, उसे किसी भी प्रकार कर शिकार बनाने, उसे अपने अधीन बनाने तथा उसके मौलिक अधिकारों में दखलंदाजी करने की कोशिश भी हिंसा है। स्वतंत्रता का समर्थन करने वाले किसी भी मूल्य को अस्त-व्यस्त करना हिंसा ही मानी जाएगी हिंसा किसी-न-किसी प्रकार से बन का प्रयोग है।

**हिंसा पशुता की विरासत है।** यह पशु के लिए स्वाभाविक है। यह पशु से मिला हुआ संस्कार है। यह मनुष्य की विकसित चूतना पर कलंक है और उसकी विकासशील चेतना को रोकती है। हिंसा पशु के लिए प्रकृति है और मनुष्य के लिए विकृति। यह मनुष्य के जीवाणु में पैठा हुआ पाश्विक अतीत है, जो कि उसकी अवचेतन का हिस्सा बन गया है। पशु की हिंसा उसकी नैसर्गिक वृत्ति के अनुसार होने पर भी वह अपनी जाति में हिंसा नहीं करता। लेकिन, अपनी विशिष्ट बुद्वि के बावजूद मनुष्य अपनी जाति में ही नहीं, कभी दूसरे को पीड़ित करने का रस लेते हुए भी हिंसा करता है। लेकिन, जब तक मनुष्य हिंसा की भावना से भरा है, वह असल में पशु ही है। मनुष्य तब तक मनुष्य नहीं बन पाएगा जब तक वह अपने भीतर के हिंसा-भाव से मुक्त न हो जाए।

**हिंसा आत्महिंसा का विकास है।** वह इन्सान के अपने भीतरी संघर्ष की अभिव्यक्ति है। हिंसा जब लड़ाई के रूप में व्यक्त होती है उसकी अलग-अलग मकसद हैं। कोई धन के लिए, काई यश के लिए और कोई पद के लिए लड़ता है, कोई खेल में लड़ता है, तो कोई अकारण भी। अपना बाहरी रूप कुछ भी हो, हिंसा पहले स्वयं पर वार करती है। हिंसा की जड़ अहंकार है। जो भी 'मं' नहीं हैं उसे अपना दुश्मन समझ कर खत्म करने की सनक इसकी धुन है। यह अपने अंतर्द्वद्व से पलायन करने का मानसिक चाल है। हिंसा रोगी मन की सक्रिय दशा है । जो भीतर से दुखी है, वह दूसरे को सुखी देखकर बर्दाश्त नहीं कर सकता । हिंसा दुखी 'मैं' का फैलाव है। यह मनुष्य के भीतर भरे हुए विष का रेचन है। यह मन में खौलते हुए दुर्भावों का निकास है। हिंसा भीतरी घुटन की बेकाबू स्थिति है। कोई भी स्वयं को मार कर ही दूसरों को मार सकता है। अपने टूटे-बिखरे हुए मन की पीड़ा को दूसरों पर प्रक्षेपित करना ही हिंसा है। हिंसा मुर्झाये हुए मन के द्वारा खेली जा रही आँख-मिचौनी का खेल मात्र है।

**हिंसा कमज़ोरी का प्रच्छनन रूप है।** इन्सान अपने में जो कमी होती है, उसकी पूर्ति के लिए कुछ ईजाद किया करता है। दृष्टिहीनों का कुशल कलाकार जोना और व् रूपों का बहुत वाचाल होना इस बात को प्रमाणित करते हैं। जो हीनता की भावना से पीड़ित है, वह अपने को श्रेष्ठ सिद्ध करने की चेष्टा किया करता है। कमी की परिपूरक की यह खोज एक आम बात है। हिंसा

कमज़ोरी की परिपूर्ति है। पशु के पास अपनी रक्षा के लिए अस्त्र-शस्त्र के रूप में नाखुन और दाँत हैं। आदती को उसके स्थान पर छुरी-तलवार की ज़रूरत पड़ती है। इन्सान पशु की तुलना में शरीर और मन में बहुत संवेदनशील है। इसके अलावा, जो उसकी समझ से परे है उसको लेकर उसमें भय होता है। यह भय ही इन्सान की सबसे बड़ी कमज़ोरी है। हिंसा की बुनियाद इसी में निहित है। जो सबसे अधिक हिंसक है वह भीतर से सबसे अधिक कमज़ोर हैं उल्टा भी, जो सबसे कम हिंसक है वही सबसे अधिक शक्तिशाली है। हिंसा बँटे हुए मन का नतीजा है। खण्डित मन बिखरा हुआ है। खण्डों की आपसी लड़ाई मन को बुरी तरह से दुर्बल कर देती है और उसी दुर्बलता में हिंसा की भावना पनपती है: यद्यपि बदले की प्रतिक्रिया अपने आपसे है, तथापि उसकी अभिव्यक्ति  दूसरे की तरफ हो जाती है।

**हिंसा का हमराही है क्रोध।** क्रोध के बिना हिंसा नहीं हो सव ती। हिंसा के बिना क्रोध भी रह नहीं सकती। दोनों आपस में पूरक हैं और उनका कार्य अक्सर सांम्मलित रूप से सम्पन्न होता है। मनुष्य के जीवाणुओं में हिंसा की प्रवृत्ति पशुओं की विरासत के रूप में पायी जाती है। उसकी मानसिक-शारीरिक ग्रन्थियों में जहर-सा इकठ्ठा हुआ क्रोध बह निकलने के बहाने की ताक में रहती है। मौका पाकर जब वह व्यक्त होता है उसमें ऐसी ताकत रहती है जो उन्यथा असंभव काम करवाने लायक है। क्रोध एक नशा है। यह एक अस्थसी पागलपन है। इसके हावी हो जाने पर कोर्ह ऐसा काम कर डालता है, जिस वह करना नहीं चाहता। क्रोधावश में जो होता है उसके परिणाम का निवारण भी नहीं हो सकता।

**हिंसा भीतरी मृत्यु का द्वन्द्व है।** जिंदगी में जीने-मरने दोनों की इच्छा नकारात्मक उर्जाओं के कारण है। एक तरफ जहाँ प्रकाश है, सत्य है, शान्ति है, अहिंसा है, विनम्रता है, हृदयशीतलता है, जिजीविशा है, जिज्ञासा है, जीवन है, दूसरी तरफ़ अंधेरा है, असत्य है, अशान्ति है, घमण्ड है, उग्रता ह, निराशा है, असफलता है, हिंसा है, मौत है। इन दोनों छोरों के बीच विरोध का भाव रहता है। इनके आपसी तनाव में सन्तुलन बनाये रखना ही वास्तव में ज़िन्दगी है। से सिराएँ एक गाड़ी के दो चक्के के समान आपस में पूरक भी हैं। लेकिन हिंसा में पूरकता का संतुलन बिगड़ जाता है और मौत की वासना **'मैं मरना नहीं चाहता'** इस भाव से जीवन की प्रक्रिया पर उल्टा प्रभाव जमाता है। यह भीतरी लड़ाई दूसरे के प्रति  हिंसा के रूप में आरोपित हो जाती है। विरोधाभासी खेल में हिंसा-तंत्र में विद्यमान भयंकर मानसिक त्रासदी व। खुलासा होता है।

**हिंसा विकास का उल्लघंन है।** आगे बढ़ना विकास का भाव है। जो कल था, अगर आल भी वही है तो आज व्यर्थ गया। आगे बढ़ने के लिए बीते हुए कल को छोड़ना होगा, वर्तमान में आना होगा, भविष्योन्मुख होना ज़रूरी है। विकास के लिए कल का अतिक्रमण करना होगा, अतीत के प्रति मरना चाहिए। लेकिन, हिंसा में नहीं मरने का भाव है। नया पाने के लिए पुराना खोना ज़रूरी है। हिंसा भविष्य को रोकता है, नष्ट करता है। अतीत तो खत्म हो ही गया। वर्तमान भी हाथ से यों ही छूट जाता है। अर्थात्, हिंसा में अतीत वर्तमान और भविष्य तीनों एक साथ तहस-नहस होते हैं। इसलिए हिंसा में मानवीय विकास नामुमकिन होता है।

हिंसा आतंकवाद का मृर्त रूप है। यह उसका हथियार है, उसकी अभिव्यक्ति  है। इसमें दया, उदारता, प्रेम आदि कोमल गुणों या मानवोचित विशेषताओं का पूर्ण अभाव है। इसमें कठोरता है, उग्रता है, उदण्डता है, कट्टरता है, क्रूरता है और हमेशा लड़ने की तत्परता हैं दूसरों का हनन करना, उन्हें कष्ट पहुँचाना, उनको नष्ट करना इसका ध्येय है। हिंसा का ऐसा चरित्र इन्सानियत के लिए सदैव खतरा है तथा वह पूर्णतया आंतकवादी है।

### 4. आंतकवाद के विभिन्न आयाम

**आंतकवाद के तौर-तरीके बेशुमार हैं।** विद्यालय के सामान नष्ट करना, बस जलाना, विश्वविद्यालय फूँक डालना, आत्मघाती बम बनना, बाइबिल जलाना, मस्ज़िद गिराना, दूसरे समुदाय के आराध्य पुरुष की प्रतिमा को नष्ट करना, किसी साध्वी के साथ बलात्कार करना, किसी पादरी की हत्या करना, जन्माष्टमी के जुलूस पर पत्थर मारना, दूसरे राजनीतिक दल के वरिष्ठ नेताओं

को तरकीब से मरवाना आदि-आदि आतंकवाद के आम ढंग हैं। किसी की टाँग खींचना, परनिन्दा करना, किसी का स्थानान्तरण करवाना, किसी की शिकायत करना, किसी का चरित्र-हनन करना आदि भी आतंकवाद की बारीक चालबाजी में सम्मिलित हैं। **आतंकवाद के** विश्वव्यापी जंजाल के कतिपय संस्थागत रूप हैं। इन संस्थाओं का उल्लेख यहाँ गैर-ज़रूरी होगा। से संस्थाएँ किसी-न-किसी प्रकार से आतंक की भावना को लेकर अस्तित्व रखती और कार्य करती हैं।

साथ ही, आतंकवाद जीवन के करीब सभी क्षेत्रों में किसी-न-किसी प्रकार से पाया जाता है। इसके अनेक प्रकार गिनाये जा सकते हैं। धार्मिक आतंकवाद, साँस्कृतिक आतंकवाद, वैचारिक आतंकवाद, भावनात्मक आतंकवाद, व्यावसायिक आतंकवाद, आर्थिक आतंकवाद, पर्यावरण-संबंधी आतंकवाद, लिंग-संबंधी आतंकवाद, पारिवारिक आतंकवाद, राजनैतिक आतंकवाद आदि इसके कुछ प्रमुख आयाम हैं।

**धार्मिक आतंकवाद** सर्वाधिक मौलिक और खतरनाक है। धर्म के सहारे लोगों की भावनाओं को आसानी से भड़काया जा सकता है। धर्मनेता अपने अनुयायियों को पाखण्डपूर्ण कर्मकाण्ड की पद्धति में फँसाकर उसके पालन के लिये उनकी भावनाओं को दण्ड-व्यवस्था के सहारे मज़बूर करते हैं। धर्मवादी अपनी अन्ध-धर्मिकता को बौद्धिक रंग देने के लिए बुद्धिजीवियों वो अपने साथ जोड़कर रखते हैं। अनेक तथकथित पढ़-लिखे लोग धर्म के भीतर मौजूद अन्धविश्वासों तथा ढकोसलों को जानने के बावजूद उनके प्रति कट्टर मानसिकता अपनाये रहते हैं। धार्मिक आतंकवाद मानव समाज को जड़ से नष्ट करने में सक्षम है। यह सभी धमों और सम्प्रदायों में विद्यमान है। संस्थागत धर्मों तथा संगठित संदर्भों इसकी गुरुता ज़्यादा होती है।

**साँस्कृतिक आंतकवाद** थोड़ा सुधरे किस्म का धर्मवाद है। भावनाओं में थोड़ी तार्किकता तथा ज़रा नफ़ासत इसका स्वभाव है। धार्मिक आतंकाद को अमलीजामा पहनाने के लिए विचारों वा सहारा लिया जाता है। साँस्कृतिक आतंकवाद में संस्कृति के विविध पहलुओं को लेकर कट्टरता है। लेकिन इनके समर्थकों को संस्कृति की कोई परवाह नहीं है और सांस्कृतिक गौरव की कोई फिक्र भी नहीं है। संस्कृति केवल भोले-मासूम लोगों की भावनाओं के साथ खेलने का मात्र बहाना है। अपनी संस्कृति केवल भेल-मासूम लोगों की भावनाओं के साथ खेलने का मात्र बहाना है। अपनी संस्कृति को श्रेष्ठ तथा दूसरे की संस्कृति को हीन सिद्ध कर उन पर सत्ता जमाने के लिए जंग का ऐलान करना सांस्कृतिक आतंकवाद का तरीका है। नतीजे और प्रक्रिया में धार्मिक आतंकवाद के समान ही यह भी मनुष्यता-विरोधी उन्माद ही है।

**आर्थिक आतंकवाद** वैश्वीकरण और उदारीकरण से जुड़ा हुआ है। यह आधुनिक सभ्यता और प्रगति की आड़ में छिपा हुआ है। आर्थिक असमानता उसकी मूल वजह है। कुछ लोगों की अति-संपन्नता तथा कुछ लोगों की अति-विपन्नता उसका आधार हैं। गला-काट प्रतियोगिता उसका माध्यम है। स्वार्थ और भ्रष्टाचार उसके सहचर हैं। अमीरी और गरीबी के बीच की बढ़ती खाई उसका परिणाम है। अशान्ति, असंतोष, निराशा आदि उसकी उपलब्धियाँ हैं। अर्थात अर्थ के कारण आतंक की स्थिति बनी रहती है।

**आतंकवाद पर्यावरिक भी है।** अपने मनोरंजन के लिए इन्सान अपने परिवेश के साथ अक्सर भ्रष्ट बर्ताव करता है। धरती का दुरुपयोग करना, वन्य-जीवों की शिकारी करना, जल-स्रोतों तथा नदी-नालों को बर्बाद करना आदि पर्यावरण सम्बन्धो आंमकवाद हैं। अपने पास ज़्यादा ज़मीन घेर कर रखना, ज़रूरत से ज़्यादा धन-सम्पत्ति बटोद कर रखना, रोजमर्रा के जीवन के संसाधनों को बर्बाद होने देना, ज़िंदगी के फेलाव की धुन में अपनी सीमा का उल्लंघन करना, दूसरे के हिस्से का अतिक्रमण करना, पृथ्वी की गोद में, पानी में, हवा में तथा धरती पर पल रहे पशु-पक्षियों, जीव-जन्तुओं तथा मानव समाज के जीवन का किसी भी प्रकार से बेवजह क्रमभंग करना पर्यावरण-संबंधी आतंकवाद है।

व्यवसाय के क्षेत्र में आतंक की भावना बड़ी मात्रा में पाई जाती है। अपना व्यवसाय चुनने में जाति, वर्ग, धर्म, भाषा, विचारधारा आदि के आधार पर किसी के साथ भेदभाव रखना, नियम व व्यवहार को तोड़-मरोड़ की दूसरे के अवसरों को लूटना, अति-

प्रतियोगिता के माध्यम से किसी को अपने पेश-संबंधी हक से वंचित करना, हक-संबंधी आरक्षणों के नियमों को तोड़ना, उद्योग-धन्धे में बेईमानी करना, व्यापार में धोखाधड़ी से मुनाफा हासिल करना आदि व्यावसायिक आतंकवाद के अन्दर आते हैं।

**विचार हर प्रकार के आतंकवाद की जड़ है।** स्वार्थ से लेकिन विचार आतंक को जन्म देता है। कुर्तो के माध्यम से विकृत विचारों को सीमित किया जाता है। संस्थागत रूप में विकृत विचार भिन्न-भिन्न दिशाओं को पकड़ लेता है। इस प्रकार जीवन के विभिन्न क्षेत्रों को छुते हुए तरह-तरह के आतंकवाद मानव समाज पर काबिज हो जाता है। अपने विचारों को दूसरों पर थोपना, अपनी बात को दूसरों से जबरदस्ती से मनवाना, अपने इशारों पर दूसरों को नचाना आदि भी वैचारिक आतंकवाद के अलग-अलग तरीके हैं।

**भावनात्मक आतंकवाद** दूसरों की भावनाओं के साथ खेलता है। खास तौर पर कमज़ोर दिलवाले इसकी गिरफ्त में आते हैं। किसी की भवनाओं को उकसाना, चिन्ताजनक परिस्थितियाँ पैदा करना, किसी को तनावग्रस्त करना, किसी की एकाग्रता को भंग करना, किसी की भावनाओं को बिखेर कर उसे अन्यमनस्क करना आदि भावनात्मक आतंकवाद है। जलन, निंदा, अपमान, क्रोध आदि असकी की कुछ हीन अभिव्यक्तियाँ हैं ।

**लिंग सम्बन्धी आतंकवाद** पुरुष के द्वरा नारी जाति के साथ किये जाने वाले भेदभाव से शुरू होना है। महिलाओं को बराबरी के स्तर पर सम्मान नहीं देना, उन्हें दबा कर रखना, शिक्षा, नौकरी आंद क्षेत्रों में महिलाओं को अपने अवसरों से वांचत करना, नारीजातीय भ्रूणों की अत्या करना, नारी को महज वासना की दृष्टि से देखना, उसके साथ बलात्कार करना, जिस्मफरोशी के लिए बाध्य करना आदि लिंगाविषयक आतंकवाद के उदाहरण हैं।

परिवार के विभिन्न सदस्यों के बीच होने वाली ज्यादतियों में पारिवारिक आतंकवाद पाया जाता है। पति द्वारा पत्नी के साथ समान स्तर का निषेध करना, नशाखोरी आदि व्यसनों के आदी होकर उसे पीड़ित करना, उसके साथ बलात्कार या अन्य किसी प्रकार का अत्याचार करना, उसे व वल वासना की वस्तु या सेविका समझना, पत्नी द्वारा पति के साथ असहयोग की भावना रखना, पति या पत्नी द्वारा व्यभिचार, बेईमानी या अन्य किसी प्रकार का विश्वासघात करना आदि पारिवारिक आतंकवाद के कुछ बुनियादी रूप हैं। माता पिता द्वारा अपनी हैसियत से अधिव बच्चों को पैदा करना, बच्चों के प्रति लापरवाही बरतना, भिक्षावृत्ति के लिए अपने बच्चों को अंगभंग करना, दहेज आदि कारणों से बहू को जलाना-पीड़ित करना, बच्चों द्वारा माता-पिताओं के साथ मर्यादा को तोड़ना, भाई-दूसरे का अतिक्रमण करना तथा पारिवारिक शान्ति को भंग करने वाली कोई भी बात पारिवारिक आतंकवाद के भीतर गिनायी जा सकती है।

**आतंकवाद** का सबसे उग्र रूप **राजनीति** में पाया जाता है। 'मैं ही रहूँ', 'मैं राज करूँ' — इन्सान की ये दो सहज वृत्तियाँ बढ़कर राजनीति का रूप लेती हैं। इन वृत्तियों की बुनियाद में ही नहीं, प्रक्रिया मे भी आतंक की भावना कूट-कूट कर भरी हुई हैं। निरंकुशता और तानाशाही की ओर कोई हद नहीं होती। दूसरों की स्वतंत्रता के हनन के साथ-साथ धर्म-विचार, समाज की भलाई आदि मूल्यों का बहाना पेश करके उन्हे डरा-धमकाकर या चालाकी से गुलाम बनाना राजनीति का ढंग है। राजनेता, चाहे वह धर्मसापेक्ष हो या धर्मनिरपेक्ष, जरूरत-से-ज्यादा महत्व अपनी ओर खींचते हैं और विशिष्ठ अधिकार के नाम पर संसार की सर्वोत्तम चीजों को हथियाते हैं। बड़े ही शरीफ तरीके से भले ही पेश आयें, नेतागिरी और दादागिरी राजनीति की पहचान है। अहंकार, उद्दण्डता, चालबाजी आदि उसका स्वभाव है। दूसरे पर आव्रमण करके उसे अधीनस्थ करना या नष्ट करना सत्ताधारी अपनी सत्ता की सांसारिक उपलब्धि मानता है। इन्सानियत कि लिए सबसे बड़ा खतरा और कुछ नहीं है। आतंकवाद के लिए सबसे सुरक्षित जगह राजनीति है। अपराध राजनीति के सहारे पलता है। इसलिए राजनीति के भष्ट रूप को ही आतंकवाद कहना समीचीन लगता हैं। आतंकवाद की सफलता की कुँजी भी राजनीति के हाथ में है।

**निष्कर्ष**

आतंकवाद चाहे वह राष्ट्रीय या अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर हो, जातीय या वर्गीय स्तर पर हो, व्यक्ति या समुदाय के स्तर पर हो, विचार या भाव के स्तर पर हो, सत्ता या सम्प्रदाय के स्तर पर हो, अर्थ या पेशे के स्तर पर हो, समाज के प्रति एक घोर अपराध है। इसमें अपनी सीमा का उल्लंघन आकर जिन्दगी के दूसरे के हिस्से का अतिक्रमण दोनों एक साथ घटित होते है। यह एक उन्माद है, एक विकृति है, एक बीमारी है और एक मानसिक विकलांगता है। जहाँ एक तरफ यह ईश्वर का तिरस्कार है वहाँ दूसरी तरफ यह इन्सानियत के लिए जानलेवा जहर साबित होता है। यह मानवीय जिन्दगी को अमानवीय और निरर्थक साबित करने वाला एक क़हर और अभिशाप है।

सहिष्णुता इस सर्वांगीण त्रासदी से छुटकारा दिलाने लायक नुस्खा है। 'जियो-जीने दो' और प्रेम, भाईचारा और सेवा का जीवन दर्शन' इन्सान के लायक जीवन के लिये शक्ति तथा अर्थ-वर्धक तत्व हैं। आपसी सद्भाव, समभाव, संबंध, सहयोग और समन्वय का महामंत्र ही आंतकवाद से इन्सान को गौरवमयी 'घर-वापसी' है।

---

**डॉ. एम. डी. थॉमस**
**संस्थापक निदेशक, इंस्टिट्यूट ऑफ़ हार्मनि एण्ड पीस स्टडीज़, नयी दिल्ली**
प्रथम मंजिल, ए 128, सेक्टर 19, सेक्टर 19, द्वारका, नयी दिल्ली 110075

दूरभाष: 09810535378 (p), 08847925378 (p), 011-45575378 (o)
ईमेल : mdthomas53@gmail.com (p), ihps2014@gmail.com (o)
बेबसाइट: www.mdthomas.in (p), www.ihpsindia.org (o)

Twitter: https://twitter.com/mdthomas53
Facebook: https://www.facebook.com/mdthomas53
Academia.edu: https://independent.academia.edu/MDTHOMAS